पेरिस
अप्रैल ६, २००८

संदेश संख्या – १४०

क्रिया–अभ्यास का सार !

जिस घर में बहुत समय तक कोई न रहा हो, जहाँ प्रत्येक खिड़की बन्द हो और प्रकाश तक प्रवेश न करता हो, वहाँ गन्दगी का जमाव हो ही जाता है और उसमें विभिन्न कीट–पतंग भी उत्पन्न हो जाते हैं । ठीक उसी तरह, जब शरीर चित्तवृत्ति के बहिर्मुखी गतिविधियों में फँसा रहता है और लम्बे समय से घर अर्थात् अन्तर्चेतना में लौटना नहीं होता तो वह सुख, दुःख, दुःखभोग, भावुकता, आवेग, भय, वासना, विश्वास पद्धति, द्वन्द्व आदि गन्दगियों से भर जाता है ।

जिस तरह व्यक्ति घर की सफाई सर्वप्रथम लम्बेहत्थे वाले झाड़ू से फर्श और दिवालों पर दिखने वाले धूलकणों की सफाई से शुरू करता है और फिर क्रमिक रूप से सफाई के सूक्ष्म साधनों के उपयोग द्वारा, घर धोता है, कीटनाशक का छिड़काव करता है, शीशे की सफाई करता है, खिड़िकियाँ खोलता है आदि और ऐसा तब तक करता है जब तक घर अच्छी तरह साफ नहीं हो जाता । उसी तरह क्रिया के विभिन्न चरणों के माध्यम से व्यक्ति अपने शरीर की तब तक सफाई करता है जब तक मानसिक अवशेषों और अवसादों की गन्दगी दूर न हो जाती और जीवन के प्रवेश के लिए मस्तिष्क की खिड़कियाँ खुल न जातीं। इस तरह ''मैं–पना'' से मुक्ति हो जाती है और चैतन्य जाग्रत हो जाता है ।

लेकिन दोनों में भिन्नता है । घर की सफाई की प्रक्रिया में, जिस चीज की सफाई की जाती है, वह घर है और वह सफाई–कर्त्ता से भिन्न है । और आन्तरिक सफाई में, जिस चीज की सफाई की जाती है, वह मन है और वही मन, सफाई–कर्त्ता होने का भी ढोंग करता है । ऐसी स्थिति में मन गन्दगी को छिपा लेता है और गन्दगी की केवल पुनर्व्यवस्था कर ली जाती है ।

अतः प्रश्न हैः– क्या यह सम्भव है कि सफाई, सफाई–कर्त्ता के बिना हो जाय ? इसके नहीं होने का खतरा बहुत यथार्थ है क्योंकि जब सफाई कर्त्ता मन है तब कोई सफाई नहीं होती । इसीलिए, गुरु–वाणी जो अत्यंत सरल है उसे समझना बहुत कठिन होता है ।

पतंजलि ने बहुत सुन्दर कहा है कि – योग ''प्रयत्न–शैथिल्य'' की अवस्था में घटित होता है । प्रयत्न अहंकार है और ''मैं'' रूपी भ्रांति भी । चित्तवृत्ति के तल पर किए गए सभी प्रयत्न अहंकार की गतिविधियाँ है और अहंकार की सभी गतिविधियाँ खण्डित तथा जटिल होती हैं ।

लक्ष्य प्राप्ति में विफलता के भय के कारण प्रयत्न किया जाता है । भय भी मन ही है । प्रयत्न के कारण या दूसरे शब्दों में, कर्त्ता–भाव के साथ ''मैं'' की संलिप्तता के कारण ही सांख्य (समझदारी) घटित नहीं होता । जब तुम कहते हो, ''मैं प्रयत्नशैथिल्य के लिए कोशिश कर रहा हूँ,'' तब तुम उसमें परस्पर–विरोध नहीं देख पाते, क्योंकि अनुबन्धन के कारण मस्तिष्क दोषयुक्त हो गया है । यदि यह अभी दिख जाए तो मुक्ति भी तत्काल हो जाए । लेकिन जब व्यक्ति विश्लेषण करता है तब केवल विचार होता है और देखना स्थगित हो जाता है। ''मैं'' जब कुछ नहीं करता तब चैतन्य सब कुछ करता है ।

अतः सुझाव है कि यद्यपि सांख्य घटित नहीं होता फिर भी संघर्ष न करें, क्रिया–अभ्यास में बने रहें । यह सांख्य के घटित होने में सहायक हो सकता है क्योंकि वे परस्पर अनुपूरक हैं ।

जब कोई क्रिया करता है तो उसे ''पाठ्यक्रम पूरा करने'' जैसी हड़बड़ी नहीं होनी चाहिए । अन्तर्मुखी प्राणायाम करते समय जब अवधान (attention) मेरुदण्ड के साथ तादात्म्य स्थापित कर गतिमान होता है तब क्या सुषुम्ना से श्वास लेने का अनुभव होता है ? बाद में जब १२ के गुणक में इसे बढ़ाया जाता है तो शरीर इसे किस तरह लेता है ? १४४ प्राणायाम करने में कितना समय लगता है ? क्या १२ दिनों का व्रत ठीक से किया गया है ? इसके प्रति सजग हैं या नहीं, यह आपको देखना है । ''मैं'' की गतिविधि में शामिल हुए बिना यदि क्रियाएँ धैर्य और समझदारी से की जाय तो विस्फोट बहुत दूर नहीं । इसीलिए लाहिड़ी महाशय ने कहा है–''प्रथम चरण की क्रिया भी मुक्त कर सकती है और सभी चरणों की क्रियायें भी बंधन बन सकती हैं, यदि ''मैं'' का कर्त्ता–भाव सतत् जारी रहा''।

द्वितीय चरण में, जब व्यक्ति एक से अगले में जाता है तो उसे यह देखना है कि उसने सम्यक् रूप से पहला पूरा किया था या नहीं । उच्च–क्रियाओं का मुख्य उद्देश्य, स्थूल और सूक्ष्म स्तरों में गहरी गति (क्रिया) द्वारा मानसिक अवशेषों और अवसादों को शरीर की कोशिकाओं से उखाड़कर बाहर कर
देना है ।

स्वाध्याय के साथ किया गया क्रिया–अभ्यास गहरी समझदारी लाएगा अन्यथा यह भी केवल मानसिक प्रयत्न बन जाएगा । इसीलिए हमलोगों ने पुनरावलोकन–कागज में स्पष्ट रूप से कहा है'' जब प्रबोध में विस्फोट होता है तो वह केवलयोग के कारण नहीं वरन् उसके बिना भी हो सकता है ।''

इस संदेश के प्रत्येक शब्द पर ध्यान करें न कि उसका विश्लेषण । तभी आप इन शब्दों के परे की प्रज्ञा को सुन सकेंगे । अन्यथा, आप आध्यात्मिक मण्डी के धूर्त्ततापूर्ण विचारों में ही खो जायेंगे ।

।। कार्य में अकर्त्ता–भाव की जय ।।